आठवाँ अध्याय

कारक, समास और तद्धित प्रकरण

कारकविचार

करोति क्रियां जनयतीति कारकम्–क्रिया के उत्पादक को कारक कहते हैं; अथवा 'क्रियान्वयि कारकम्'–क्रिया के साथ जिसका सम्बन्ध हो, उसे कारक कहते हैं। हेमचन्द्र ने–'क्रियाहेतुः कारकम्' क्रिया की उत्पत्ति में जो हेतु–सहायक हो, उसे कारक कहा है। प्राकृत में संस्कृत के समान ही कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान और अधिकरण ये छः कारक हैं। प्राकृत के वैयाकरणों ने सम्बन्ध को कारक नहीं माना है और न षष्ठी (छट्ठी) विभक्ति के रूपों को ही पृथक् स्थान दिया है। षष्ठी के रूप चतुर्थी के समान ही होते हैं। वास्तविक बात यह है कि सम्बन्ध कारक का क्रिया के साथ सम्बन्ध नहीं है। यथा–विउसाणं परिसाए मुरुक्खेहिं मउणं सेवीअउ, अन्नह मुक्खत्ति नज्जिहिन्ति'–विद्वानों की सभा में मूर्खों को मौन रहना चाहिए, अन्यथा उनकी मूर्खता प्रकट हो जाती है। इस वाक्य में 'सेवीअउ' क्रिया के साथ 'विउसाणं' का किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है और न 'विउसाणं' में सेवीअउ' क्रिया का जनकत्व–उत्पादकत्व ही है। अतः यह पद षष्ठी विभक्ति तो है, पर सम्बन्ध कारक नहीं है।

विभक्ति की परिभाषा करते हुए कहा है–''संख्याकारकबोधयित्री विभक्तिः''–जिसके द्वारा संख्या और कारक का बोध हो, वह विभक्ति है। 'विउसाणं' से विद्वानों के समूह का बोध होता है, अतः वह षष्ठी विभक्ति तो है, पर कारक नहीं।

विभक्ति और कारक में एक अन्तर यह भी है कि कारक कुछ है और विभक्ति कुछ हो जाती है यथा–कर्ता में सर्वदा प्रथमा और कर्म में द्वितीया विभक्ति ही नहीं होती; बल्कि कर्त्ता में तृतीया और कर्म में प्रथमा विभक्ति भी होती है। जैसे–''रावणो रामणे हओ'' इस वाक्य में हनन क्रिया का वास्तविक कर्ता राम है, पर राम प्रथमा विभक्ति में नहीं है, तृतीया विभक्ति में रखा गया है। इसी प्रकार हनन क्रिया का वास्तविक कर्म रावण है, उसे द्वितीया विभक्ति में न रखकर प्रथमा विभक्ति में रखा गया है।

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

१. कर्त्ता—क्रिया के द्वारा जिस संज्ञा के सम्बन्ध में विधान किया जाता है, उस संज्ञा के रूप को कर्ता कारक कहते हैं[१]। जैसे—रामो 'झाईअइ'—में 'झाईअइ' क्रिया राम के सम्बन्ध में विधान करती है कि राम ध्यान करता है।

प्रथमा विभक्ति के नियम—

(१) प्रातिपदिकार्थ—शब्द का मात्र अर्थ, लिंगमात्र, परिमाणमात्र अथवा वचन मात्र बतलाने के लिए प्रथमा विभक्ति होती है।[२] प्रातिपदिक शब्द का अर्थ—''नियतोपस्थितिकः प्रातिपदिकार्थः''—जिस शब्द की जिस अर्थ के साथ नियम से उपस्थिति हो, उसे प्रातिपदिकार्थ कहते हैं। प्रातिपदिकार्थ में प्रथमा विभक्ति होती है। यथा—जिणो, वाऊ, पज्जुणो, सयंभू, णाणं आदि।

संस्कृत के समान प्राकृत में भी शब्द में जब तक प्रत्यय नहीं लगता, तब तक उसका अर्थ नहीं जाना जा सकता है। प्रातिपदिक (Crude form) में सुप् आदि विभक्तियों को जोड़ने से ही अर्थ प्रकट होता है। उदाहरण के लिए यों समझना चाहिए कि विभक्ति रहित देव शब्द का उच्चारण करें तो यह निरर्थक होगा। जब 'देवो' उच्चारण करते हैं तभी इस शब्द का अर्थ 'देव' ने यह प्रकट होता है। इसलिए संज्ञा, सर्वनाम और विशेषण में विभक्ति प्रत्यय जोड़े जाते हैं।

लिंगमात्र में—तडो, तडी, तडं; परिमाणमात्र में—वजन मात्र का ज्ञान कराने के लिए—दोणोव्वीही—यहाँ प्रथमा विभक्ति से व्रीहि का द्रोण रूप परिमाण विदित होता है।

वचनमात्र—एको, बहू आदि।

(२) सम्बोधन में भी प्रथमा विभक्ति होती है। यथा— हे देवो, हे देवा, हे पुज्जुणो, हे पज्जुणा।

२. कर्म—जिस पदार्थ पर क्रिया के व्यापार का फल प्राप्त होता है, उस पदार्थ से सूचित होनेवाली संज्ञा के रूप को कर्म कारक कहते हैं। किसी वाक्य में प्रयोग किये गये पदार्थों में से जिसको कर्ता सबसे अधिक चाहता है, उसे कर्म कहते हैं।[३] अर्थात् कर्ता के लिए जो अत्यन्त ईप्सित—अभीष्ट है, उसी की कर्म संज्ञा होती है। जैसे—'मासेसु अस्सं बंधइ' उड़द के खेत में घोड़े को बाँधता है, इस

---

१. स्वतन्त्रः कर्त्ता २।२।२. हे.।

२. प्रातिपदिकार्थलिंगपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा २।३।४६ पा.।

३. कर्तुरीप्सिततमं कर्म १।४।४९. पा.।

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

वाक्य में बाँधने वाला अपनी बाँधने की क्रिया के द्वारा अश्व को वशंगत करना चाहता है। अतः बन्धन व्यापार द्वारा अश्व ही कर्ता को अभीष्ट है, उड़द नहीं। उड़द की चाह अश्व को हो सकती है और उसके प्रलोभन से उसका बाँधना सुगमतर हो सकता है, परन्तु कर्ता को उसकी चाह नहीं है। अतः मासेसु में कर्म संज्ञा नहीं हुई।

क्रियाविशेष द्वारा जो कर्ता को अत्यन्त अभीष्ट है, उसी की कर्म संज्ञा होती है। जैसे–पयेण ओदनं भुंजइ–दूध से भात खाता है, वाक्य में दूध भी भात की तरह कर्ता को प्रिय है, पर कर्ता अपने भोजन व्यापार द्वारा, जिसे सबसे अधिक पाना चाहता है, वह भात है, दूध नहीं। यतः दूध पेय है, यह तो केवल भोजन क्रिया के सम्पादन में सहायक है, अतः यहाँ पर पयेण की कर्म संज्ञा नहीं है, ओदनं की है।

(१) अनुक्त कर्म को बतलाने के लिए कर्म कारक में द्वितीया विभक्ति का प्रयोग होता है।[१] यथा–हरिं भजइ, गामं गच्छइ, वेअं पढइ, पुत्थकं पढइ, झाणं झाईअइ, अत्थं चिव्वइ।

(२) सप्तमी और प्रथमा विभक्ति के स्थान पर क्वचित् द्वितीया विभक्ति होती है।[२] यथा–विज्जुज्जोमं भरइ रत्तिं–विद्युदुद्योतं भरति रात्र्याम्–यहाँ सप्तमी के स्थान पर द्वितीया हुई है।

चउवीसं पि जिणवरा–चतुर्विंशतिरपि जिनवराः–यहाँ प्रथमा के स्थान पर द्वितीया हुई है।

(३) संस्कृत के समान प्राकृत में भी द्विकर्मक धातुओं के योग में अपादान आदि कारकों में भी द्वितीया विभक्ति होती है। यथा–

(१) माणवअं पहं पुच्छइ–बच्चे से रास्ता पूछता है।

(२) रुक्खं ओचिव्वइ फलाइं–वृक्ष के फलों को इकट्ठा करता है।

(३) माणवअं धम्मं सासइ–माणवक से धर्म कहता है।

(४) शी, स्था और आस् धातुओं के पूर्व यदि अधि (अहि) उपसर्ग लगा हो तो इन क्रियाओं के आधार की कर्म संज्ञा होती है। यथा–अहिचिट्ठइ वइउंठं हरी।

(५) अहि और नि उपसर्ग जब एक साथ विश् (विस) धातु के पहले आते हैं, तो विश् के आधार को कर्म कारक होता है। यथा–अहि निवसइ सम्मग्गं।

(६) यदि वस् घातु के पूर्व उव, अनु, अहि और आ में से कोई भी उपसर्ग लगा हो तो क्रिया के आधार को कर्मकारक होता है। यथा–

---

१. कर्मणि द्वितीया २।३।२. पा.। २. सप्तम्या द्वितीया ८।३।१३७ हे.

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

हरी वइउंठं उववसइ, अहिवसइ, आवसइ वा।

(७) अहिओ (अभितः)–चारों ओर, परिओ (परितः)–सब ओर, समया–समीप, निकहा (निकषा)–समीप, हा, पडि, धिअ, सव्वओ और उवरि–उवरि शब्दों की जिनमें सन्निकटता पाई जाय उनमें द्वितीया विभक्ति होती है। यथा–

अहिओ किसणं, परिओ किसणं, गामं समया, निकहा लंकं, हा किसणा मत्तं, परिजणो रायाणं अहिओ चिट्ठइ।

(८) अणु के योग में द्वितीया विभक्ति होती है। यथा–णईं अणुवसिआ सेना; अणुहरिं सुरा, मोहणं अणुगच्छइ हरी।

(९) अधिक तथा हीन अर्थ का वाचक होने पर अणु के योग में भी द्वितीया विभक्ति होती है। यथा–अणुहरिं सुरा–देवता हरि से हीन हैं।

(१०) जब अंगुलि निर्देश करना हो, इत्थंभूत–ये इस प्रकार के हैं–यह बतलाना हो, भाग–यह उनके हिस्से में पड़ा या पड़ता है, यह प्रकट करना हो अथवा पुनरुक्ति दिखलानी हो तो पडि, परि और अणु के योग में द्वितीया विभक्ति होती है। यथा–

(१) वच्छं पडि विज्जुअइ विज्जु–वृक्ष पर बिजली चमकती है।
(२) भत्तो विसणुं पडि अणु वा–विष्णु के ये भक्त हैं।
(३) लच्छी हरिं पडि अणु वा–लक्ष्मी विष्णु के हिस्से में पड़ी या पड़ें।
(४) वच्छं वच्छं पडि सिच्चइ–प्रत्येक वृक्ष को सींचता है।

(११) पूजार्थ में सु अव्यय और उल्लंघन अर्थ में अइ अव्यय के योग में द्वितीया विभक्ति होती है। यथा–

अइ देवा किसणो–कृष्ण सब देवताओं की अपेक्षा पूज्य हैं।
सुसिप्पअं वच्छं–अच्छी तरह सींचा हुआ वृक्ष।

३. करण कारक—अपने कार्य की सिद्धि में कर्ता जिसकी सबसे अधिक सहायता लेता है, उसे करण कहते हैं। यथा–''रामेण बाणेन हओ बाली'' वाक्य में कर्ता राम बाली को मारने में सबसे अधिक सहायता बाण की लेता है; यों तो हाथ और धनुष भी सहायक हैं, पर ये अत्यन्त सहायक नहीं है, अतः इन्हें करण कारक नहीं माना जायगा। तात्पर्य यह है कि जो क्रिया–फल की निष्पत्ति में साधन का बोध कराता है, उसे करण कारक कहते हैं। करण अर्थ में तृतीया विभक्ति होती है। यथा–रामो जलेन कडं पच्छालइ।

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

(१) प्रकृति–स्वभावादि अर्थों में तृतीया होती है। यथा–पइईअ चारू–स्वभाव से सुन्दर, गोत्तेण गग्गो, रसेण महुरो, सुहेण जाइ। किं जणणिजोव्वणविउडणमत्तेण जम्मेणं।

(२) दिव् धातु के योग में विकल्प से द्वितीया विभक्ति भी होती है। यथा–अच्छेहिं अच्छा वा दीव्वइ–पाशों से या पाशों को खेलता है।

(३) समपूर्वक णा धातु के कर्म की विकल्प से करण संज्ञा होती है। यथा–पिअरेण, पिअरं वा सण्णाणइ–पिता के साथ मेल से रहता है।

(४) फलप्राप्ति या कार्यसिद्धि को बतलाने के लिए तृतीया विभक्ति होती है। यथा–दुवालसवरसेहिं वाअरणं सुणइ–द्वादशवर्षैः व्याकरणं श्रूयते।

(५) सह, सामं, सायं और सद्धं के योग में तृतीया विभक्ति होती है। यथा–पुत्तेण सहाअओ पिआ–पुत्रेण सहागतः पिता; लक्खणो रामेण साअं गच्छइ, देवदत्तो जग्गदत्तेण समं नहाति।

(६) पिधं, बिना, नाना शब्दों के साथ तृतीया, द्वितीया या पञ्चमी विभक्ति होती है। यथा–पिधं रामेण, रामत्तो, रामं वा; जलेन, जलत्तो, जलं वा; जलं बिना कमलं चिट्ठतुं ण सक्कइ।

(७) जिस विकृत अंग के द्वारा अङ्गी का विकार मालूम हो, उस अंग में तृतीया विभक्ति होती है। यथा–पाएण खंजो, कण्णेन बहिरो–पैर का लँगड़ा; कान का बहिरा।

(८) जिस कारण या प्रयोजन से कोई कार्य किया जाता है या होता है, उसमें तृतीया विभक्ति होती है। यथा–

दंडेण घडो जाओ–दण्डे के कारण घड़ा उत्पन्न हुआ।

पुण्णेण दिट्ठो हरि–पुण्य के कारण हरि दिखलायी पड़े।

अज्झणेण वसइ–अध्ययन के प्रयोजन से रहता है।

(९) जो जिस प्रकार से जाना जाय, उसके लक्षण में तृतीया विभक्ति होती है। यथा–

जडाहिं तावसो–जटाओं से तपस्वी जान पड़ता है।

गमणेण रामं अणुहरइ–गमन में राम के सदृश है।

(१०) कार्य, अर्थ, प्रयोजन, गुण तथा इसी प्रकार उपयोग या प्रयोजन प्रकट करने वाले शब्दों के योग में उपयोज्य या आवश्यक वस्तु को तृतीया विभक्ति होती है। यथा–

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

तिणेण कज्जं भवइ ईसराणं–धनी लोगों का कार्य तिनके से भी हो जाता है।

को अत्थो पुत्तेण जो ण विउसो ण धम्मिओ–उस पुत्र के उत्पन्न होने से क्या लाभ है, जो न विद्वान् है और न धर्मात्मा।

(११) आर्ष प्रयोगों में सप्तमी स्थान में तृतीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। यथा–

तेणं कालेणं, तेणं समएणं–तस्मिन् काले, तस्मिन् समये–उस समय में।

४. सम्प्रदान कारक—दानकार्य के द्वारा कर्ता जिसे संतुष्ट करता है, उसे सम्प्रदान कहते हैं। अर्थात् जिस पदार्थ के लिए कोई क्रिया की जाती है, उसका बोध कराने वाली संज्ञा के रूप को संप्रदान कारक कहते हैं। सम्प्रदान में चतुर्थी विभक्ति होती है। यथा–विप्पाय या विप्पस्स गावं देइ–विप्राय गां ददाति।

(१) रोअ–रुच् धातु तथा रुच् के समान अर्थवाली अन्य धातुओं के योग में प्रसन्न होने वाला सम्प्रदान कहलाता है और सम्प्रदान को चतुर्थी होती है। यथा–

हरिणो रोयइ भत्ती–हरी को भक्ति अच्छी लगती है।

बालकस्स मोअआ रोअन्ते–बालकाय मोदकाः रोचन्ते, बालक को लड्डू अच्छे लगते हैं। मम तव वियारो रोयइ–मुझे तुम्हारा विचार अच्छा लगता है।

तस्स वाआ मज्झं न रोयइ–उसकी बात मुझे अच्छी नहीं लगती।

(२) सलाह (श्लाघ), हुण, (ह्नुङ्), चिट्ठ (स्था) और सव (शप्) धातुओं के योग में जिसको जाना जाय उसकी सम्प्रदान संज्ञा होती है और सम्प्रदान को चतुर्थी विभक्ति होती है। यथा–

गोवी समरत्तो किसणाय किसणस्स वा सलाहइ, चिट्ठइ, सवइ वा–गोपी कामदेव के वश से श्रीकृष्ण के अर्थ अपनी श्लाघा करती है, स्थित होकर कृष्ण को अपना अभिप्राय बताती है तथा कृष्ण के लिए अपना उपालम्भ करती है।

(३) धर–धङ् उधार लेना–कर्ज लेना धातु के योग में चतुर्थी विभक्ति होती है। यथा–

भत्ताय, भत्तस्स वा धरइ मोक्खं हरी–हरि भक्त के लिए मोक्ष को धारण करते हैं।

सामो अस्सपइणो सइं धरइ– श्याम ने अश्वपति से एक सौ कर्ज लिए।

(४) सिह (स्पृह) धातु के योग में जिसे चाहा जाय, वह सम्प्रदानसंज्ञक होता है और सम्प्रदान को चतुर्थी विभक्ति में रखते हैं। यथा–

पुप्फाणं सिहइ–पुष्पेभ्यः स्पृहयति–फूलों की चाहना करता है।

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

(५) कुज्झ (क्रुध्), दोह (द्रुह), ईस (ईर्ष्या) तथा असूअ (असूय्) धातुओं के योग में तथा इन धातुओं के समान अर्थवाली धातुओं के योग में जिनके ऊपर क्रोधादि किये जाते हैं, उनको चतुर्थी विभक्ति होती है। यथा– हरिणो कुज्झइ, दोहइ, ईसइ, असूअइ, वा।

(६) निश्चित काल के लिए वेतन इत्यादि पर किसी को रखा जाना परिक्रयण कहलाता है, उस परिक्रयण में जो करण होता है, उसकी विकल्प से सम्प्रदान संज्ञा होती है। यथा–

सयेण सयस्स वा परिकीणइ–सौ रूपये के वेतन पर रखा गया।

(७) जिस प्रयोजन के लिए कोई कार्य किया जाय, उस प्रयोजन में चतुर्थी विभक्ति होती है। यथा–

मुत्तिणो हरिं भजइ–मुक्ति के लिए हरि को भजता है।

भत्ती णाणाय कप्पइ, संपज्जइ, जाअइ वा।

(८) हेमचन्द्र के मत से तादर्थ्य–उसके लिए–अर्थ में षष्ठी विभक्ति विकल्प से आती है। यथा–

मुणिस्स, मुणीणं देइ–मुनीनं मुनिभ्यो वा ददाति।

नमो नाणस्स–नमो ज्ञानाय, नमो गुरुस्स–नमो गुरवे।

देवस्स देवाय नमो।

(९) हित और सुख के योग में चतुर्थी विभक्ति होती है। यथा–

बंभणस्स हिअं सुहं वा–ब्राह्मण के लिए हितकर या सुखकर।

(१०) नमो, सुत्थि, सुहा, सुआहा और अलं के योग में चतुर्थी विभक्ति होती है। यथा–

हरिणो नमो–हरि को नमस्कार हो।

पआणं सुत्थि–प्रजा का कल्याण हो।

पिअराणं सुहा–पितरों को यह समर्पित है।

अलं मल्लो मल्लस्स–मल्ल दूसरे मल्ल के लिए पर्याप्त–काफी है।

५. अपादान कारक—जिससे किसी वस्तु का विश्लेष होता है, उसे अपादान कारक कहते हैं। अपादान में पञ्चमी विभक्ति होती है। यथा–धावत्तो अस्सत्तो पडइ–दौड़ते हुए घोड़े से गिरता है।

(१) दुगुञ्छ, विराम और पमाय तथा इनके समानार्थक शब्दों के साथ पञ्चमी विभक्ति होती है। यथा–पावत्तो दुगुञ्छइ, विरमइ वा; धम्मत्तो पमायइ।

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

(२) जिसके कारण डर मालूम हो अथवा जिसके डर के कारण रक्षा करनी हो, उस कारण को पञ्चमी विभक्ति होती है। यथा–चोरओ बीहइ, सप्पओ भयं; रामो कलहत्तो बीहइ।

(३) प्राकृत में 'भी' धातु के योग में पञ्चमी के अर्थ में चतुर्थी विभक्ति भी पायी जाती है। यथा–दुट्ठाण को न बीहइ–दुष्टेभ्यः को न बिभेति–दुष्टों से कौन नहीं डरता है।

(४) पञ्चमी के अर्थ में षष्ठी विभक्ति भी देखी जाती है। यथा–चोरस्स बीहइ–चौराब्दिभेति–चोर से डरता है।

(५) पञ्चमी के स्थान में कहीं–कहीं तृतीया और सप्तमी विभक्ति भी पायी जाती हैं। यथा–चोरेण बीहइ–चौराब्दिभेति; अन्तेउरे रमिउमागओ राया–अन्तःपुराद् रन्त्वागत इत्यर्थः।

(६) परापूर्वक जि धातु के योग में जो असह्य होता है, उसकी अपादान संज्ञा होती है और पञ्चमी विभक्ति हो जाती है। यथा–अज्झयणत्तो पराजयइ।

(७) जनधातु के कर्ता का आदिकारण अपादान होता है। यथा–कामत्तो कोहो अहिजाअइ, कोहत्तो मोही अहिजाअइ।

६. प्रातिपदिक और कारक के अतिरिक्त स्वस्वामिभावादि सम्बन्ध में षष्ठी विभक्ति होती है। मुख्यतः सम्बन्ध चार प्रकार का है–स्वस्वामिभाव सम्बन्ध, जन्य-जनक भाव सम्बन्ध, अवयवावयविभाव सम्बन्ध और स्थान्यादेश। साहुणो धणं में स्वस्वामिभाव सम्बन्ध है, यतः साधु धन का स्वामी है। पिअरस्स, पिउणो वा पुत्तं में जन्य-जनकभाव सम्बन्ध है। पसूणो पाअं में अवयव–अवयविभाव सम्बन्ध है, यतः पशु अवयवी है और पैर उसके अवयव हैं। गम् के स्थान में अइच्छ, अई और अक्कस आदेश होता है, अतः यहाँ स्थान्यादेश सम्बन्ध माना जायगा। इन सम्बन्धों के अतिरिक्त कार्य-कारणादि और भी सम्बन्ध हैं, सम्बन्ध में षष्ठी विभक्ति होती है। यथा–काअस्स अंगाणि पसंसेइ–कौए के अंगों की प्रशंसा करता है। जहा तुह अंगाणि अईव मणोहराणि तहा तुमं सुमहुराइं गीयाइं गाउं समत्थो सि–जैसे–तुम्हारे अंग सुन्दर हैं, वैसे ही तुम सुमधुर गाना गाने में भी समर्थ हो।

(१) कर्मादि में भी सम्बन्धमात्र की विवक्षा होने पर षष्ठी विभक्ति हो जाती है। यथा–तस्स वाहरणत्थं माहावाहिहाणा चेडी पेसिया–उसे बुलाने के लिए माधवी नाम की दासी को भेजा।

तस्स कहियं–उससे कहा; माआए, माऊए वा सुमरइ–माता को याद करता है।

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

(२) हेउ शब्द के प्रयोग में जो शब्द कारण या प्रयोजन रहता है, वह और हेउ शब्द दोनों ही षष्ठी में रखे जाते हैं। यथा–अन्नस्स हेउस्स वसइ–अन्न प्राप्ति के प्रयोजन से रहता है। कस्स हेउस्स वसइ–किस कारण रहते हो।

(३) द्वितीया–तृतीयादि विभक्ति के स्थान पर षष्ठी विभक्ति होती है।[१] यथा–सीमाधरस्स वन्दे–सीमाधरं वन्दे; तिस्सा मुहस्स भरिमो–तस्या मुखं भरामः; धणस्स लुद्धो–धनेन लुब्धः; तेसिमेअमणाइण्णं–तैरेतदनाचरितम्; चिरस्स मुक्का–चिरेण मुक्ता; इअराइं जाण लहुअक्खराइं पायन्तिमिल्ल सहिआण–पादान्तेन सहितेभ्यः इतराणि।

७. अधिकरण कारक—कर्ता और कर्म के द्वारा किसी भी क्रिया का आधार अधिकरण कहलाता है। आधार के तीन भेद हैं–औपश्लेषिक, वैषयिक और अभिव्यापक। जिसके आधेय का भौतिक संश्लेष हो, उसे औपश्लेषिक आधार कहते हैं। जैसे–कडे आसइ कागो–यहाँ चटाई से बैठने वाले का भौतिक संश्लेष प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होता है। जिसके साथ आधेय का बौद्धिक संश्लेष हो, उसे वैषयिक आधार कहते हैं। यथा–मोक्खे इच्छा अत्थि–इच्छा का मोक्ष में अधिष्ठित होना बौद्धिक संश्लेष है। जिसके साथ आधेय का व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध हो, उसे अभिव्यापक कहते हैं। यथा–'तिलेसु तेलं' में तैल तिल के किसी एक भाग में नहीं रहता है, बल्कि समस्त तिल में व्याप्त रहता है।

(१) अधिकरण तथा दूर एवं अन्तिक अर्थ वाले शब्दों में सप्तमी विभक्ति होती है। कडे आसइ कागो; गामस्स दूरे अन्तिए वा।

(२) सामी, ईसर, अहिवइ, दायाद, साखी, पडिहू और पसूअ इन सात शब्दों के योग में षष्ठी और सप्तमी ये दोनों ही विभक्तियाँ होती हैं। यथा–

गवाणं गोसु वा सामी, गवाणं गोसु वा पसूओ।

(३) यदि किसी वस्तु का अपने समुदाय की अन्य वस्तुओं में से किसी विशेषण द्वारा वैशिष्ट्यनिर्देश किया जाये तो समुदायवाचक शब्द सप्तमी अथवा षष्ठी विभक्ति में रखा जाता है। यथा–कइसु कईणं वा हरिचन्दो सेट्ठो–कवियों में हरिश्चन्द्र सबसे बड़े कवि है। गवाणं गोसु वा किसणा बहुक्खीरा–गायों में काली गाय बहुत दूध देने वाली है। छत्ताणं छतेसु वा गोइन्दो पडु–विद्यार्थियों में गोविन्द श्रेष्ठ है।

---

१. क्वचित् द्वितीयादेः ८।३।१३४–द्वितीयादीनां विभक्तीनां स्थाने षष्ठी भवति क्वचित्।

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

(४) द्वितीया और तृतीया विभक्ति के स्थान में क्वचित् सप्तमी विभक्ति हो जाती है[१]। यथा–गामे वसामि–ग्रामं वसामि; नयरे न जामि–नगरं न यामि। तिसु तेसु वा अलंकिआ पुहवी–तैरलंकृता पृथिवी।

(५) पञ्चमी के स्थान पर भी सप्तमी पायी जाती है[२]। यथा–अन्तेउरे रमिउं आगओ राया–अन्तःपुराद् रन्त्वाऽऽगतो राजा।

(६) मध्य अर्थ या अधिकरण अर्थ बतलाने के लिए सप्तमी विभक्ति होती है। यथा–एत्थंतरम्मि पत्तो एसो तवोवणं, अणेयवियप्पजणियकुचिन्तासंधुक्कियपवड्ढमाणकोहाणलो य कुलवइं सेसतावसे य परिहरिऊण अलक्खिओ चेव गओ सहयारवीहियं, उवविट्ठो य विमलसिलाविणिम्मिए चाउरन्तपीढे त्ति।

(७) वास्तविक बात यह है कि प्राकृत में विभक्तियों के व्यवहार का कोई विशेष नियम नहीं है। कहीं द्वितीया और तृतीया के स्थान में सप्तमी, कहीं पञ्चमी के स्थान में तृतीया तथा सप्तमी और प्रथमा के बदले द्वितीया विभक्तियाँ व्यहृत होती हैं।

❑❑❑

आहती जैन विद्यापीठ

१. द्वितीया–तृतीययोः सप्तमी ८।३।१३५. हे.–द्वितीयातृतीययोः स्थाने क्वचित् सप्तमी भवति।

२. पंचम्यास्ततीया च ८।३। १३६ पञ्चम्याः स्थाने क्वचित् सप्तमी भवति।

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

समास विचार

(१) '' समसनं समासः''–संक्षेप को समास कहते हैं अर्थात दो या अधिक शब्दों को इस प्रकार साथ रखना, जिससे उनके आकार में कमी आ जाय और अर्थ भी प्रकट हो जाय। तात्पर्य यह है कि परस्पर सम्बद्ध अर्थवाले शब्दों का एक रूप में मिलना समास है। समास से सिद्ध पद–सामासिक या समस्तपद कहलाते हैं। समस्तपद के प्रत्येक पद को विभक्तियों के साथ अलग–अलग करने को विग्रह कहते हैं।

समास मुख्यतः चार प्रकार के होते हैं–(१) अव्ययीभाव, (२) तत्पुरुष, (३) बहुब्रीहि और (४) द्वन्द्व। अव्ययीभाव में पहले पद के अर्थ की, तत्पुरुष में दूसरे पद के अर्थ की, बहुब्रीहि में अन्य पद के अर्थ की तथा द्वन्द्व में सभी पदों के अर्थों की प्रधानता होती है।

तत्पुरुष समास दो प्रकार का होता है–(१) समानाधिकरण तत्पुरुष और (२) व्यधिकरण तत्पुरुष। समानाधिकरण तत्पुरुष का ही दूसरा नाम कर्मधारय समास है। द्विगु समास कर्मधारय का ही भेद है।

एकशेष समास भी स्वतन्त्र नहीं है, यह द्वन्द्व का ही एक उपभेद है। कहा भी है–

दंदे य बहुव्वीही कम्मधारय दिगुयए चेव।
तप्पुरिसे अव्वईभावे एक्कसेसे य सत्तमे॥

(१) अव्ययीभाव (अव्वईभाव)

(१) अव्ययीभाव समास में पहला पद बहुधा कोई अव्यय होता है और यही प्रधान होता है। अव्ययीभाव समास का समूचा पद क्रियाविशेषण अव्यय होता है।

(२) विभक्ति आदि अर्थों में अव्यय का प्रयोग होने पर अव्ययीभाव समास होता है।

(१) विभक्ति अर्थ में–हरिम्मि इइ–अहिहरि; अप्पंसि अन्तो–अज्झप्पं।

(२) समीप अर्थ में–गुरुणो समीवं–उवगुरु; सिद्धगिरिणो समीवं–उवसिद्धगिरिं।

(३) पश्चात् अर्थ में–जिणस्स पच्छा–अणुजिणं; भोयणस्स पच्छा–अणुभोयणं।

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

(४) समृद्धि अर्थ में–मद्दाणं समिद्धि–सुमद्दं।
(५) अभाव अर्थ में–मच्छिकाणं अभाओ–निम्मच्छिकं।
(६) अत्यय–नाश में–हिमस्स अच्चओ–अइहिमं।
(७) असम्प्रति–अनौचित्य अर्थ में–निद्दा संपइ न जुज्जइ–अइनिद्दं।
(८) यथा का भाव–योग्यता–रूवस्स जोग्गं–अणुरूपम् (अनुरूपम्)।
,, वीप्सा–नयरं नयरं ति–पइनयरं (प्रतिनगरम्)।
,, ,, –द्विणं द्विणं ति–पइदिणं (प्रतिदिनम्)।
,, ,, –घरे घरे ति–पइघरं (प्रतिगृहम्)।
,, अनतिक्रम–विहिं अणइक्कमिअ–जहाविहि (यथाविधि)।
,, ,, –सत्तिं अणइक्कमिऊण–जहासत्ति (यथा–शक्ति)।
(९) आनुपूर्व्य–क्रम–जेट्ठस्स अणुपुव्वेण–अणुजेट्ठं (अनुज्येष्ठम्)।
(१०) यौगपद्य–एक साथ होना–चक्केण जुगवं–सचक्कं (सचक्रम्)।
(११) सम्पत्ति–छत्ताणं संपइ–सछत्तं (सछत्रम्)।

(२) तत्पुरुष (तप्पुरिस)

(१) उत्तरपदार्थप्रधानस्तत्पुरुषः–जिसमें उत्तरपद के अर्थ की प्रधानता रहती है, उसे तत्पुरुष समास कहते हैं। राइणो पुरिसो = रायपुरिसो में उत्तरपद पुरुष की प्रधानता है। तात्पर्य यह है कि तत्पुरुष समास में प्रथम पद विशेषण और द्वितीय पद विशेष्य रहता है, अतः विशेष्य की प्रधानता रहने के कारण इसमें उत्तरपद की प्रधानता मानी जाती है।

तत्पुरुष समास के आठ भेद हैं–प्रथमा तत्पुरुष, द्वितीया तत्पुरुष, तृतीया तत्पुरुष, चतुर्थी तत्पुरुष, पञ्चमी तत्पुरुष, षष्ठी तत्पुरुष, सप्तमी तत्पुरुष और अन्य तत्पुरुष।

(१) प्रथमा तत्पुरुष (पढमा तप्पुरिस)

(१) पुव्व, अवर, अहर और उत्तर प्रथमान्त पद अपने अवयवी षष्ठ्यन्त के साथ एकाधिकरण में समास को प्राप्त होते हैं। यथा–पुव्वं कायस्स = पुव्वकायो, अवरं कायस्स = अवरकायो, उत्तरं गामस्स = उत्तरगामो।

(२) द्वितीया तत्पुरुष (बीया तप्पुरिस)

(१) सिअ, अतीत, पडिअ, गअ, अइअत्थ, पत्त और आवण्ण शब्दों के योग में द्वितीया विभक्ति के आने पर द्वितीया-तत्पुरुष समास होता है। यथा–

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

किसणं सिओ = किसणसिओ, इंदियं अतीतो = इंदियातीतो (इन्द्रियातीतः), अग्गिं पडिओ = अग्गिपडिओ (अग्निपतितः), सिवं गओ = सिवगओ (शिवगतः), सुहं पत्तो = सुहपत्तो (सुखप्राप्तः), भद्दं पत्तो = भद्दपत्तो (भद्रप्राप्तः), पलयं गओ = पलयगओ (प्रलयगतः), दिवं गओ = दिवगओ (दिवंगतः), कट्ठं आवण्णो = कट्ठावण्णो (कष्टापन्नः), मेहं अइअत्थो = महाइअत्थो (मेघात्यस्तः), वीरं अस्सिओ = वीरस्सिओ (वीराश्रितः)।

(३) तृतीया तत्पुरुष (तईया तप्पुरिस)

(१) जब तत्पुरुष समास का प्रथम शब्द तृतीया विभक्ति में हो, तब उसे तृतीया तत्पुरुष कहते हैं। यथा–

साहूहिं वन्दिओ = साहुवंदिओ (साधुवन्दितः), जिणेण सरिसो = जिणसरिसो (जिनसदृशः), ईसरेण कडे = ईसरकडे (ईश्वरकृतः), दयाए जुत्तो = दयाजुत्तो (दयायुक्तः), गुणेहिं संपन्नो = गुणसंपन्नो (गुणसम्पन्नः), रसेण पुण्णं = रसपुण्णं (रसपूर्णम्), मायाए सरिसी = माउसरिसी (मातृसदृशः), कुलगुणेण सरिसी = कुलगुणसरिसी (कुलगुणसदृशः), रूवेण समाणा = रूवसमाणा (रूपसमाना), आयारेण निउणो = आयारनिउणो (आचारनिपुणः), णहेहिं भिण्णो = णहभिण्णो (नखभिन्नः), गुडेन मिस्सं = गुडमिस्सं (गुडमिश्रं), महुणा मत्तो = महुमत्तो (मधुमत्तः), पंकेन लित्तो = पंकलित्तो (पङ्कलिप्तः), बाणेन विद्धो = बाणविद्धो (बाणविद्धः)।

(४) चतुर्थी तत्पुरुष (चउत्थी तप्पुरिस)

(१) जिस तत्पुरुष समास का प्रथम पद चतुर्थी विभक्ति में हो, उसे चतुर्थी तत्पुरुष कहते हैं। यथा–

कलसाय सुवण्णं–कलससुवण्णं (कलशसुवर्णम्), मोक्खत्थं नाणं, मोक्खाय नाणं वा = मोक्खनाणं (मोक्षज्ञानम्), लोयाय हिओ = लेयहिओ (लोकहितः), लोगस्स सुहो = लोगसुहो (लोकसुखः), कुंभस्स मट्टिआ = कुंभमट्टिआ (कुम्भमृत्तिका); भूयाणं बली = भूयबली (भूतबलिः), बंभणाय हिअं = बंभणहिअं (ब्राह्मणहितम्), गवस्स हिअं = गवहिअं (गोहितम्), थंभाय कट्ठं = थंभकट्ठं (यूपदारुः), बहुजणस्स हिओ = बहुजणहिओ (बहुजनहितः)।

(५) पञ्चमी तत्पुरुष (पंचमी तप्पुरिस)

(१) जब तत्पुरुष समास का पहला पद पञ्चमी विभक्ति में रहता है, तब उसे पञ्चमी तत्पुरुष कहते हैं। यथा–

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

संसाराओ भीओ = संसारभीओ (संसारभीतः), दंसणाअ भट्ठो = दंसणभट्ठो (दर्शनभ्रष्टः), अन्नाणाओ भयं = अन्नाणभयं (अज्ञानभयम्), वग्घाओ भयं = वग्घभयं (व्याघ्रभयं), रिणाओ मुक्को = रिणमुत्तो (ऋणमुक्तः), चोराओ भयं = चोरभयं (चौरभयं), थेणाओ भीओ =थेणभीओ (स्तनभीतः), थोवाओ मुत्तो = थोवमुत्तो (स्तोकान्मुक्तः)।

(६) षष्ठी तत्पुरुष (छट्ठी तप्पुरिस)

(१) जिस तत्पुरुष समास का प्रथम पद षष्ठी विभक्ति में हो, उसे षष्ठी तत्पुरुष कहते हैं। यथा–

देवस्स मंदिरं = देवमंदिरं (देवमन्दिरं), कन्नाए मुहं = कन्नामुहं (कन्यामुखम्), नरस्स इंदो=नरिंदो (नरेन्द्रः), देवस्स इंदो = देविंदो (देवेन्द्रः), लेहस्स साला = लेहसाला (लेखशाला), विज्जाए ठाणं = विज्जाठाणं (विद्यास्थानं), समाहिणो ठाणं =समाहिठाणं (समाधिस्थानम्), देवस्स थुई = देवत्थुई, देवथुई (देवस्तुतिः), जिणाणं इन्दो =जिणेन्दो, जिणिन्दो (जिनेन्द्रः), विबुहाणं अहिवो = विबुहाहिवो (विबुधाधिपः), बहूए मुहं=बहूमुहं (वधूमुखम्), धम्मस्स पुत्तो= धम्मपुत्तो (धर्मपुत्रः), गणिअस्स अज्झावओ = गणिआज्झावओ (गणिताध्यापकः), देवस्स पुज्जओ = देवपुज्जओ (देवपूजकः)।

(७) सप्तमी तत्पुरुष (सत्तमी तप्पुरिस)

(१) सप्तमी तत्पुष समास उसे कहते हैं, जिसका प्रथम पद सप्तमी विभक्ति में रहा हो। यथा–

कलासु कुसले = कलाकुसलो (कलाकुशलः), बंभणेसु उत्तमो = बंभणोत्तमो (ब्राह्मणोत्तमः), जिणेसु उत्तमो = जिणोत्तमो (जिनोत्तमः), सभाए पंडिओ = सभापंडिओ (सभापण्डितः), कडाहे पक्को–कडाहपक्को (कटाहपक्व :), कम्मे कुसलो = कम्मकुसलो (कर्मकुशलः), विज्जाए दक्खो = विज्जादक्खो (विद्यादक्षः), नरेसु सेट्ठो = नरसेट्ठो (नरश्रेष्ठः), नाणम्मि उज्जओ = नाणोज्जओ, नाणुज्जओ (ज्ञानोद्योतः), गिहे जाओ = गिहजाओ (गृहजातः)।

(८) अन्यतत्पुरुष (अण्ण–तप्पुरिस)

अन्यतत्पुरुष समास के नञ् तत्पुरुष, प्रादितत्पुरुष, गतितत्पुरुष, उपपदतत्पुरुष, अलुक् तत्पुरुष, मध्यमपदलोपी तत्पुरुष एवं मयूरव्यंसकादि तत्पुरुष ये सात भेद हैं।

(क) नञ् तत्पुरुष (न तप्पुरिस)

(१) जब तत्पुरुष समास में प्रथम शब्द न और दूसरा कोई संज्ञा या विशेषण हो तो उसे नज् तत्पुरुष कहते हैं। व्यञ्जन के पूर्व न अ में और स्वर के पूर्व अण में बदल जाता है। यथा–

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

न लोगो = अलोगो (अलोकः), न देवो = अदेवो (अदेवः), न आयारो = अणायारो (अनाचारः), न इट्ठं = अणिट्ठं (अनिष्टम्), न दिट्ठं = अदिट्ठं (अदृष्टम्), न अवज्जं = अणवज्जं (अनवद्यम्), न विरई = अविरई (अविरतिः), न सच्चम् = असच्चम् (असत्यम्), न ईसो = अणीसो (अनीशः), न कयं = अकयं (अकृतम्), न बंभणो = अबंभणो (अब्राह्मणः)।

(ख) प्रादितत्पुरुष (पादितप्पुरिस)

(१) जब तत्पुरुष समास में प्रथमपद 'प्र–प' आदि उपसर्गों में से कोई हो तो उसे प्रादि तत्पुरुष कहते हैं। यथा–

पगतो आयरियो = पायरिओ (प्राचार्यः), उग्गओ वेलं = उव्वेलो (उद्वेलः), संगतो अत्थो = समत्थो (समर्थः), अइक्कंतो पल्लंकं =अइपल्लंको (अतिपल्यङ्कः), निग्गओ कासीए= निक्कासी (निष्काशी)।

(ग) उपपद समास

(१) जब तत्पुरुष समास का प्रथम पद ऐसी संज्ञा या अव्यय में हो, जिसके. न रहने से शब्द का रूप ही न रह सकता हो, तो उसे उपपद तत्पुरुष कहते हैं। यथा–

कुंभं करइ त्ति = कुंभआरो (कुम्भकारः), भासआरो (भाष्यकारः), सव्वण्णु (सर्वज्ञः), पायवो (पादपः), कच्छवो (कच्छपः), अहिवो (अधिपः), गिहत्थो (गृहस्थः), सुत्तआरो (सूत्रकारः), वुत्तिआरो (वृत्तिकारः), निव्वया (निम्नगा), नीयगा (नीचगा), नम्मया (नर्मदा), सगडब्भि (स्वकृतभित्), पावणासओ (पापनाशकः)।

(घ) कर्मधारय

(१) जब प्रथमपद विशेषण हो और दूसरा विशेष्य हो तो उसे कर्मधारय कहते हैं। इसके सात भेद हैं–(१) विशेषणपूर्वपद (२) विशेष्यपूर्वपद (३) विशेषणोभयपद (४) उपमानपूर्वपद (९) उपमानोत्तरपद (६) सम्भावनापूर्वपद (७) अवधारणापूर्वपद।

(२) जिसमें विशेषण विशेष्य से पहले रहे, उसको विशेषण पूर्वपद कहते हैं। यथा– रत्तो अ एसो घडो = रत्तघडो (रक्तघटः), सुंदरा य एसा पडिमा = सुंदरपडिमा (सुन्दरप्रतिमा), परमं एअं पयं परमपयं (परमपदम्), पीअं तं वत्थं = पीअवत्थं (पीतवस्त्रम्), गोरो सो वसभो =गोरवसभो (गौरवृषभः), महंतो सो वीरो = महावीरो (महावीरः), वीरो सो जिणो = वीरजिणो (वीरजिनः), कण्हो य सो पक्खो = कण्हपक्खो (कृष्णपक्षः), सुद्धो सो पक्खो = सुद्धपक्खो (शुद्धपक्षः)।

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

(३) जिसमें विशेष्य विशेषण से पूर्व रहे, उसे विशेष्य पूर्वपद कहते हैं। यथा–वीरो अ एसो जिणिंदो = वीरजिणिंदो (वीरजिनेन्द्रः), महंतो च सो रायो = महारायो (महाराजः), कुमारी अ सा समणा = कुमारीसमणा, कुमारसमणा (कुमारीश्रमण), कुमारी अ सा गब्भिणी = कुमारगब्भिणी (कुमारगर्भिणी)।

(४) जिसके दोनों पद विशेषणवाचक हों, वह विशेषणोभयपद कहलाता है। यथा–

रत्तो अ एस सेओ = रक्तसेओ आसो (रक्तश्वेतोऽश्वः), सीअं च तं उण्हं च = सीउण्हं जलं (शीतोष्णं जलम्), रत्तं अ तं पीअं च = रत्तपीअं वत्थं (रक्तपीतं वस्त्रम्)।

(५) उपमानवाचक शब्द जिसके पूर्वपद में रहे, वह उपमानपूर्वपद कहलाता है। यथा–

चंदो इव मुहं = चन्दमुहं (चन्द्रमुखम्), घणो इव सामो = घणसामो (घनश्यामः), वज्जो इव देहो = वज्जदेहो (वज्रदेहः), चन्दो इव आणणं = चंदाणणं (चन्द्राननम्)।

(६) उपमानवाचक शब्द जिसके उत्तरपद में हो, उसे उपमानोत्तरपद कहते हैं। यथा–

मुहं चंदो व्व = मुहचंदो (मुखचन्द्रः), जिणो चंदो व्व = जिणचंदो (जिनचन्द्रः)।

(७) जिसमें सम्भावना पायी जाय ऐसा विशेषण अपने विशेष्य के साथ समास को प्राप्त करता है और इस प्रकार के समास की सम्भावनापूर्वपद समास कहते हैं। यथा–

संजमो एव धणं = संजमधणं (संयमधनम्), तवो चिअ धणं = तवोधणं (तपोधनम्), पुण्णं चेअ पाहेज्जं = पुण्णपाहेज्जं (पूर्णपाथेयम्)।

(८) जिसमें अवधारणा पायी जाय ऐसा विशेषण पद भी अपने विशेष्य पद के साथ समस्त हो जाता है। यथा–

अन्नाणं चेअ तिमिरं = अन्नाणतिमिरं (अज्ञानतिमिरम्), नाणं चेअ धणं = नाणधणं (ज्ञानधनम्), पयमेव पउमं = पयपउमं (पादपद्मम्)।

द्विगु (दिगु)

(१) जिस तत्पुरुष के संख्यावाचक शब्द पूर्वपद में हों, वह द्विगु समास कहलाता है। द्विगु समास दो प्रकार का होता है–(१) एकवद्भावी और (२) अनेकवद्भावी।

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

(२) समाहार अर्थ में जो द्विगु समास होता है. वह एकवद्भावी कहलाता है और उसमें सदा नपुंसकलिंग और एकवचन होता है। यथा–

नवण्हं तत्ताणं समाहारो = नवतत्तं (नवतत्त्वम्), चउण्हं कसायाणं समूहो = चउक्कसायं (चतुष्कषायम्), तिण्हं लोगाणं समूहो = तिलोयं (त्रिलोकम्), तिण्हं लोआणं समूहो = तिलोई (त्रिलोकी)।

(३) प्राकृत में कोई–कोई समाहारद्विगु पुल्लिंग भी हो जाता है। यथा–

तिण्हं वियप्पाणं समाहारो त्ति = तिवियप्पो (त्रिविकल्पम्)।

(४) संज्ञा में जो द्विगु होता है, वह अनेकवद्भावी कहलाता है और इसमें वचन और लिंग का कोई नियम नहीं रहता है। यथा–

तिण्णि लोया = तिलोया (त्रिलोकाः), चउरो दिसाओ = चउदिसा (चतुर्दिशः)।

(३) बहुब्रीहि (बहुव्वीहि)

(१) जब समास में आये हुए दो या अधिक पद किसी अन्य शब्द के विशेषण हों तो उसे बहुब्रीहि समास कहते हैं। यथा–

पीअं अंबरं जस्स सो = पीआंबरो (पीताम्बरः)। इस समास के मुख्य दो भेद हैं–(१) समानाधिकरण बहुब्रीहि और (२) व्यधिकरण बहुब्रीहि। विशेषापेक्षया इसके सात भेद हैं–(१) द्विपद, (२) बहुपद (३) सहपूर्वपद (४) संख्योत्तरपद, (६) संख्योभयपद, (६) व्यतिहारलक्षण (७) दिगन्तराललक्षण।

(१) समानाधिकरण बहुब्रीहि

(२) समानाधिकरण बहुब्रीहि वह है, जिसके दोनों या सभी शब्दों का समान अधिकरण हो अर्थात् वे प्रथमान्त में हों। यथा–

पीअं अंबरं अस्स सी पीआंबरो (पीताम्बरः); आरूढो वाणरो जं रुक्खं सो = आरूढवाणरो रुक्खो (आरूढवानरः वृक्षः); जिआणि इंदियाणि जेण सो = जिइंदियो मुणी (जितेन्द्रियः मुनिः); जिओ कामी जेण सो = जिअकामो महादेवो (जितकामः महादेवः); जिआ परीसहा जेण सो = जिअपरीसहो गोयमो (जितपरीषहः गौतमः), भट्ठो आयरो जाओ सो = भट्ठायारो जणो (भ्रष्टाचारः जनः); नट्ठो मोहो जाओ सो=नट्ठमोहो साहू (नष्टमोहः साधुः); घोरं बंभचेरं जस्स सो = घोरबंभचेरो जंबू (घोरब्रह्मचारी–जम्बुः); समं चउरंसं संठाणं जस्स सो = समचउरंससंठाणो रामो (समचतुरस्रसंस्थानः रामः); कओ अत्थो जस्स सो = कयत्थो कण्हो (कृतार्थः कृष्णः); आसा अंबरं जेसिं ते = आसंबरा (दिगम्बराः); सेयं अंबरं जेसिं ते =

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

सेयंवरा (श्वेताम्बराः); महंता बाहुणो जस्स सो महाबाहू (महाबाहु); पंच वत्ताणि जस्स सो = पंचवत्तो सीहो (पञ्चवक्त्रः); चत्तारि मुहाणि जस्स सो = चउम्मुहो (चतुर्मुखः) बम्हा; तिण्णि नेत्ताणि जस्स सो = तिणेत्तो (त्रिनेत्रः) हरो; एगो दंतो जस्स सो = एगदंतो (एकदन्तः) गणेसो; वीरा नरा जम्मि गामे सो गामो = वीरणरो (वीरनरः); सुत्तो सिंघो जाए गुहाए सा = सुत्तसिंहा गुहा (सुप्तसिंहा गुफा); दिण्णाइं वयाइं जेसिं ते = दिण्णवयो साहवो (दत्तव्रताः साधवः); पत्तं नाणं जं सो = पत्तनाणो मुणी (प्राप्तज्ञानः मुनिः); जिओ कामो जेण सो = जिअकामो अकलंओ (जितकामोऽकलङ्कः); नट्ठं दंसणं जत्तो सो = नट्ठदंसणो मुणी (नष्टदर्शनो मुनिः); जिओ अरिगणो जेण सो = जिआरिगणो अजिओ (जितारिगणोऽजितः)।

(३) व्यधिकरण बहुब्रीहि वह है, जिसके सभी पद प्रथमान्त न हों, केवल एक ही पद प्रथमान्त हो और दूसरा पद षष्ठी या सप्तमी में हो। यथा–

चक्कं पाणिम्मि जस्स सो चक्कपाणी (चक्रपाणिः); चक्कं हत्थे जस्स सो चक्कहत्थो भरहो (चक्रहस्तो भरतः); गंडीवं करे जस्स सो गंडीवकरो अज्जुणो (गाण्डीवकरोऽर्जुनः)।

(२) विशेषणपूर्वपद बहुब्रीहि

(४) जिस बहुब्रीहि का प्रथम पद विशेषण हो, उसे विशेषणपूर्वपद बहुब्रीहि कहते हैं। यथा–

णीलो कंठो जस्स सो णीलकंठो मोरो (नीलकण्ठो मयूरः)।

(३) उपमानपूर्वपद बहुब्रीहि

(५) जिस बहुब्रीहि का प्रथमपद उपमान हो, उसे उपमानपूर्वपद बहुब्रीहि कहते हैं। यथा–

चन्दो इव मुहं जाए = चंदमुही कन्ना (चन्द्रमुखी कन्या); मियनयणाइं इव नयणाणि जाए सा = मियनयणा (मृगनयना); कमलनयणाइं इव नयणाणि जाए सा = कमलनयणा (कमलनयना); गजाणण इव आणणो जस्स सो = गजाणणो (गजाननः); हंसगमणं इव गमणं जाए सा = हंसगमणा (हंसगमना)।

(४) अवधारणपूर्वपद बहुब्रीहि

(६) जिसके पूर्वपद में अवधारणा पायी जाय, उसे अवधारणपूर्वपद बहुब्रीहि कहते हैं। यथा–

चरणं चेअ धणं जाणं = चरणधणा साहवो (चरणधनाः साधवः)।

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

(५) बहुपद बहुब्रीहि

(७) साधनदशा में दो से अधिक पदों का जो समास होता है, उसे बहुपद बहुब्रीहि कहते हैं। यथा–

धुओ सव्वो किलेसो जस्स सो = धुअसव्वकिलेसो जिणो (धुतसर्वक्लेशो जिनः)

(६) नञ् (न) बहुब्रीहि

(८) निषेध के अर्थवाचक अ और अण के साथ जो बहुब्रीहि समास होता है, उसे नञ् या न बहुब्रीहि कहते हैं। यथा–

न अत्थि भयं जस्स सो = अभयो (अभयः); न अत्थि पुत्तो जस्स सो = अपुत्तो (अपुत्रः); न अत्थि णाहो जस्स सो = अणाहो (अनाथः), न अत्थि पच्छिमो जस्स सो = अपच्छिमो (अपश्चिमः); न अत्थि उयरं जीए सा= अणुयरा (अनुदरा कन्या); नत्थि उज्जमो जस्स सो = अणुज्जमो पुरिसो (अनुद्यमः पुरुषः); नत्थि अवज्जं जस्स सो = अणवज्जो मुणी (अनवद्यो मुनिः)।

(७) सहपूर्व बहुब्रीहि

(९) सह अव्यय जिस बहुब्रीहि समास में हो, उसे सहपूर्वपद बहुब्रीहि कहते हैं। सह अव्यय का तृतीयान्त पद के साथ समास होता है तथा आशीर्वाद अर्थ को छोड़ शेष अर्थों में सह स्थान पर स आदेश होता है। यथा–पुत्तेण सह = सपुत्तो राया (सपुत्रः राजा); सीसेण सह = ससीसो आयरिओ (सशिष्यः आचार्यः); पुण्णेण सह = सपुण्णो लोयो (सपुण्यः लोकः); पावेण सह = सपावो रक्खसो (सपापः राक्षसः); कम्मणा सह = सकम्मो नरो (सकर्मा नरः); फलेण सह = सफलं (सफलम्); मूलेण सह–समूलं (समूलं); चेलेण सह = सचेलं ण्हाणं (सचैलं स्नानम्); कलत्तेण सह = सकलत्तो नरो (सकलत्रं)।

(८) प्रादि बहुब्रीहि

(१०) प, नि, वि, अव, अइ, परि आदि उपसर्गों के साथ जो बहुब्रीहि समास होता है, उसे प्रादि बहुब्रीहि कहते हैं। यथा–

प–पगिट्ठं पुण्णं जस्स सो = पपुण्णो जणो (प्रपुण्यः जनः)।

नि–निग्गया लज्जा जस्स सो = निल्लज्जो (णिर्लज्जः)।

वि–विगओ धवो जाए सा = विहवा (विधवा)।

अव–अवगतं रूवं जस्स सो = अवरूवो (अपरूपः)।

अइ–अइक्कंतो मग्गो जेण सो = अइमग्गो रहो (अतिमार्गः रथः)।

परि–परिअअं जलं जाए सा = परिजला परिहा (परिजला परिखा)।

निर्–निग्गआ दया जस्स सो = निद्दयो जणो (निर्दयो जनः)।

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

(४) द्वन्द्व समास (दंद समास)

(१) दो या दो से अधिक संज्ञाएँ एक साथ रखी गई हों और उन्हें च (य) शब्द के द्वारा जोड़ा गया हो तो वह द्वन्द्व समास कहलाता है। इस समास के तीन भेद हैं–

(१) इतरेतर द्वन्द्व। (२) समाहार द्वन्द्व। (३) एकशेष द्वन्द्व।

(१) इतरेतर द्वन्द्व

(२) जिस समास में आई हुई दोनों संज्ञाएँ अपना प्रधान व्यक्तित्व रखती हों, उस समास को इतरेतर द्वन्द्व कहते हैं। यथा–

पुण्णं य पावं य = पुण्णपावाइं (पुण्यपापे)।
अजिओ अ संती अ = अजियसंतिणो (अजितशान्ती)।
उसहो अ वीरो अ = उसहवीरा (ऋषभवीरौ)।
देवा य दाणवा य गंधव्वा य = देवदाणवगंधव्वा (देवदानवगन्धर्वाः)।
वाणरो अ मोरो अ हंसो अ = वाणरमोरहंसा (वानरमयूरहंसाः)।
सावओ अ साविआ य = सावअसाविआओ (श्रावकश्राविके)।
देवा य देवीओ अ = देवदेवीओ (देवदेव्यः)।
सासू अ बहू अ = सासूबहूओ (श्वश्रूवध्वो)।
भक्खं अ अभक्खं अ = भक्खाभक्खाणि (भक्ष्याभक्ष्ये)।
पत्तं य पुप्फं य फलं य = पत्तपुप्फफलाणि (पत्रपुष्पफलानि)।
जीवा य अजीवा य = जीवाजीवा (जीवाजीवौ)।
सुहं य दुक्खं य = सुहदुक्खाइं (सुखदुःखे)।
सुरा य असुरा य = सुरासुरा (सुरासुराः)।
हत्था य पाया य =हत्थपाया (हस्तपादाः)।
लाहा य अलाहा य = लाहालाहा (लाभालाभौ)।
सारं य असारं य = सारासारं (सारासारम्)।
रूवं य सोहग्गं य जोव्वणं य = रूवसोहग्गजोव्वणाणि (रूपसौभाग्ययौवनानि)।

(२) समाहारद्वन्द्व

(३) जिस समास में अ या य शब्द से जुड़ी हुई संज्ञाएँ अपना पृथक् अर्थ रखने पर भी समूह अर्थ का बोध कराती हों, उसे समाहार द्वन्द्व कहते हैं। यथा–

असणं य पाणं य एएसिं समाहारो = असणपाणं (अशनपानम्)।
तवो अ संजमो अ एएसिं समाहारो = तवसंजमं (तपःसंयमम्)।
नाणं य दंसणं य चरित्तं य एएसिं समाहारो = नाणदंसणचरित्तं (ज्ञानदर्शनचरित्रम्)।

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

राओ अ दोसो अ भयं अ मोहो अ एएसिं समाहारो = राअदोसभयमोहं (रागद्वेषभयमोहम्)।

(३) एकशेष द्वन्द्व

(४) जिस समास में दो या अधिक शब्दों में से एक ही शेष रहे, उसे एकशेष द्वन्द्व कहते हैं। यथा–

जिणो अ जिणो अ जिणो अ त्ति = जिणा (जिनाः)।

नेत्तं य नेत्तं य त्ति = नेत्ताइं (नेत्रे)।

माआ य पिआ य त्ति = पिअरा (पितरौ)।

सासू अ ससुरो अ त्ति = ससुरा (श्वशुरौ)।

❑ ❑ ❑

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

तद्धित

(१) धातुओं को छोड़ शेष प्रकार के शब्दों में जिन प्रत्ययों को जोड़ने से कुछ और भी अर्थ निकलता है, उन प्रत्ययों को तद्धित प्रत्यय कहते हैं; यथा–अण्, त्व, मत् आदि तद्धित प्रत्यय हैं। इन प्रत्ययों के लगाने से जो शब्द बनते हैं, उन्हें तद्धित कहते हैं। तद्धित प्रत्यय तीन प्रकार के होते हैं–सामान्यवृत्ति, भाववाचक और अव्ययसंज्ञक। सामान्यवृत्ति के अपत्यार्थक, देवतार्थक, सामूहिक आदि नौ भेद हैं।

(२) प्राकृत में इदमर्थ–'यह इसका' इस सम्बन्ध को सूचित करने के लिए 'केर' प्रत्यय जोड़ा जाता है।[१] यथा–

अस्मद् (अम्ह) + केर = अम्हकेरं (अस्माकमिदम् , अस्मदीयम्)।

युष्मद् (तुम्ह) + केर = तुम्हकेरं, तुम्हकेरो (युष्माकमिदम्, युष्मदीयम्, युष्मदीयः)

पर + केर = परकेरं (परस्य इदम् , परकीयम्)।

राय +केर = रायकेरं (राज्ञ इदम् , राजकीयम्)।

(३) इदमर्थ में युष्मद्, अस्मद् शब्दों से पर में रहने वाले संस्कृत अञ् प्रत्यय के स्थान पर 'एच्चय' आदेश होता है।[२] यथा–

युष्मद् (तुम्ह) + एच्चय = तुम्हेच्चयं (यौष्माकम्)।

अस्मद् (अम्ह) + एच्चय = अम्हेच्चयं (अस्माकम्)।

(४) अपत्य अर्थ में प्राकृत में संस्कृत के समान अ (अण्), इ (इञ्), आयण, एय, इत, ईण और इक प्रत्यय होते हैं। यथा–

सिव + अ–सिवस्स अपत्तं = सेवो; दसरह +ई = दासरही।

वसुदेव + अ–वसुदेवस्स अपत्तं = वासुदेवो।

नड + आयण–नडस्स अपत्तं = नाडायणो।

कुलडा + एय–कुलडाए अपत्तं = कोलडेयो।

महाउल + ईण–महाउलस्स अपत्तं = महाउलीणो।

(५) भव अर्थ बतलाने के लिए इल्ल और उल्ल प्रत्यय जोड़े जाते हैं[३] यथा–

इल्ल–गाम + इल्ल = गामिल्लं (ग्रामे भवम्), स्त्रीलिंग में गामिल्ली (ग्रामे भवा)।

---

१. इदमर्थस्य केरः ८।२।१४७। २. युष्मदस्मदोऽञ एच्चयः ८।२।१४९

३. डिल्ल-डुल्लौ भवे ८।२।१६३।

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

पुर + इल्ल–पुरिल्लं (पुरे भवम्), स्त्री. पुरिल्ली।

हेट्ठ (अधस्) + इल्ल = हेट्ठिल्लं (अधो भवम्) स्त्री. हेट्ठिल्ली।

उवरि + इल्ल = उवरिल्लं (उपरि भवम्)।

उल्ल–अप्प + उल्ल = अप्पुल्लं (आत्मनि भवम्)।

तरु + उल्ल= तरुल्लं (तरौ भवम्)।

नयर + उल्ल = नयरुल्लं (नगरे भवम्)।

(६) संस्कृत के वत् प्रत्यय के स्थान पर प्राकृत में 'व्व' आदेश होता है।[१] यथा–

व्व–महु + व्व = महुव्व (मधुवत्)

महुर + व्व = महुरव्व पाडलिपुत्ते पासया (मथुरावत् पाटलिपुत्रे प्रासादाः)

(७) संस्कृत के त्व के स्थान पर प्राकृत में डिमा और त्तण विकल्प से आदेश होते हैं।[२] यथा–

पीण + इमा = पीणिमा (पीनत्वम्)।

पीण + त्तण = पीणत्तणं, पीण + त्त = पीणत्तं (पीनत्वम्)।

पुप्फ + इमा = पुप्फिमा (पुष्पत्वम्)।

पुप्फ + त्तण = पुप्फत्तणं, पुप्फ + त्त = पुप्फत्तं (पुष्पत्वम्)।

(८) वार अर्थ प्रकट करने के लिए–क्रिया की अभ्यावृत्ति की गणना अर्थ में संस्कृत के कृत्वस् प्रत्यय के स्थान पर 'हुत्तं' आदेश होता है।[३] आर्ष प्राकृत में यह प्रत्यय खुत्तं हो जाता है। यथा–

एय + हुत्तं = एयहुत्तं (एककृत्वः–एकवारम्)।

दु + हुत्तं = दुहुत्तं (द्विवारम्)।

ति + हुत्तं–तिहुत्तं (तिवारम्)।

सय + हुत्तं = सयहुत्तं (शतवारम्)।

सहस्स + हुत्तं = सहस्सहुत्तं (सहस्रवारम्)।

(९) 'वाला' अर्थ बतलाने वाले संस्कृत के मतुप् प्रत्य के स्थान पर आलु, इल्ल, उल्ल, आल, वन्त, मन्त, इत्त, इर और मण आदेश होते हैं।[४]

आल– रस + आल = रसालो (रसवान्)।

जडा + आल = जडालो (जटावान्)।

---

१. वतेर्व्वः ८।२।१५०। २. त्वस्य डिमा–त्तणौ वा ८।२।१५४।

३. कृत्वसो हुत्तं ८।२।१५८। ४. आल्विल्लोल्लाल–वन्त–मन्तेत्तेर–मणा मतोः ८।२।१५९।

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

जोण्हा + आल = जोण्हालो (ज्योत्स्नावान्)
सद्द + आल = सद्दालो (शब्दवान्)
फडा + आल = फडालो (फटावान्)

आलु– ईसा + आलु = ईसालू (ईर्ष्यावान्)
दया + आलु + दयालू (दयालु)
नेह + आलु = नेहालू (स्नेहवान्)
लज्जा + आलु = लज्जालु (लज्जावान्), स्त्री. लज्जालुआ (लज्जावती)

इत्त– कव्व + इत्त = कव्वइत्तो (काव्यवान्)
माण +इत्त = माणइत्तो (मानवान्)

इर– गव्व + इर = गव्विरो (गर्ववान्)

इल्ल– सोहा + इल्ल = सोहिल्लो (शोभावान्)
छाया + इल्ल = छाइल्लो (छायावान्)
जाम + इल्ल = जामइल्लो (यामवान्)

उल्ल– वियार + उल्ल = वियारुल्लो (विचारवान्)
वियार + उल्ल = वियारुल्लो (विकारवान्)
मंस + उल्ल = मंसुल्लो (श्मश्रुवान्)
दप्प + उल्ल = दप्पुल्लो (दर्पवान्)

मण– धण + मण = धणमणो (धनवान्)
सोहा + मण = सोहामणो (शोभावान्)
बीहा + मण = बीहामणो (भीयान्)

मंत– हनु + मंत = हणुमंतो (हनुमान्)
सिरि + मंत = सिरिमंतो (श्रीमान्)
पुण्ण + मंत = पुण्णमंतो (पुण्यवान्)

वंत– धण + वंत = धणवंतो (धनवान्)
भत्ति + वंत = भत्तिवंतो (भक्तिमान्)

(१०) संस्कृत के तस् प्रत्यय के स्थान पर प्राकृत में त्तो और विकल्प से दो आदेश होते हैं।[१] यथा–

सव्व + तस् (त्तो) = सव्वत्तो, सव्वदो, सव्वओ (सर्वतः)
एक + तस् (त्तो) = एकत्तो, एकदो, एकओ (एकतः)
अन्न + तस् (त्तो) = अन्नत्तो, अन्नदो, अन्नओ (अन्यतः)

---

१. त्तो दो तसो वा ८।२।१६० तसः प्रत्ययस्य स्थाने त्तो, दो इत्यादेशौ भवतः।

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

कु + तस् (त्तो) = कुत्तो, कुदो, कुओ (कुतः)
ज + तस् (त्तो) = जत्तो, जदो, जओ (यतः)
त = तस् (त्तो) = तत्तो, तदो, तओ (ततः)
इ + तस् (त्तो) = इत्तो, इदो, इओ (इतः)

(११) संस्कृत के त्रप् प्रत्यय के स्थान पर प्राकृत में हि, ह और त्थ प्रत्यय आदेश होते हैं।[१] यथा–

ज + त्र (हि) = जहि, जह, जत्थ (यत्र)
त + त्र (हि) = तहि, तह, तत्थ (तत्र)
क + त्र (हि) = कहि, कह, कत्थ (कुत्र)
अन्न + त्र (हि) = अन्नहि, अन्नह, अन्नत्थ (अन्यत्र)

(१२) स्वार्थिक क प्रत्यय के स्थान पर प्राकृत में विकल्प से अ, इल्ल और उल्ल प्रत्यय आदेश होते हैं।[२] यथा–

अ– चंद + अ = चंदओ, चंदो (चन्द्रकः)
हअय + अ = हिअयअं, हिअयं (हृदयकम्)
बहुअ + अ = बहुअअं, बहुअं (बहुकम्)
इल्ल–पल्लव + इल्ल = पल्लविल्लो, पल्लवो (पल्लवः)
पुरा + इल्ल = पुरिल्लो, पुरा (पुरा)
उल्ल–पिअ + उल्ल = पिउल्लो, पिआ (पिता)
हत्थ + उल्ल = हत्थुल्लो, हत्थो (हस्तः)

(१३) अंकोठ शब्द को छोड़ शेष बीजवाची शब्दों से लगने वाले तैल प्रत्यय के स्थान पर प्राकृत में 'एल्ल' प्रत्यय जोड़ा जाता है।[३] यथा–

कडु + तैल = कडुएल्लं (कटुतैलम्)।
अंकोठ + तैल = अंकोल्लतेल्लं (अङ्कोठतैलम्)

(१४) यद्, तद् और एतद् शब्दों से पर में आने वाले परिमाणार्थक प्रत्यय के स्थान में इत्तिअ आदेश होता है और एतद् शब्द का लुक् भी होता है।[४] यथा–

यत् (ज) + इत्तिअ = जित्तिअं (यावत्)
तद् (त) + इत्तिअ = तित्तिअं (तावत्)
एतद् + इत्तिअ = इत्तिअं (एतावत्)

---

१. त्रपो हि-हित्थाः ८।२।१६१ त्रप् प्रत्ययस्य एते भवन्ति।
२. स्वार्थे कश्च वा ८।२।१६४ ३. अनङ्कौठात्तैलस्य डेल्लः ८।२।१५५
४. यत्तदेतदोतोरित्तिअ एतल्लुक् च ८।२।१५६

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

(१५) इदम्, किम्, यद्, तद् और एतद् शब्दों से पर में आने वाले परिमाणार्थक प्रत्यय के स्थान में डेत्तिअ, डेत्तिल और डेद्दह आदेश होते हैं। इन प्रत्ययों के आने पर एतद् शब्द का लुक हो जाता है।[१] यथा–

ज + एत्तिअ = जेत्तिअं
ज + एत्तिल = जेत्तिलं
ज + एद्दह = जेद्दहं
} यावत्

त + एत्तिअ = तेत्तिअं
त + एत्तिल = तेत्तिलं
त + एद्दह = तेद्दहं
} तावत्

एत + एत्तिअ = एत्तिअं
एत + एत्तिल = एत्तिलं
एत + एद्दह = एद्दहं
} एतावत्, इयत्

क + एत्तिअ = केत्तिअं
क + एत्तिल =केत्तिलं
क + एद्दह = केद्दहं
} कियत्

(१६) भाववाचक संस्कृत के त्व और तल प्रत्यय के स्थान पर ये ही प्रत्यय रह जाते हैं।[२] यथा–

मृदुक + त्व = मउअत्त + ता = मउअत्तता, मउअत्तया (मृदुकत्वता)।

(१७) एक शब्द के उत्तर में होने वाले दा प्रत्यय के स्थान में सि, सिअं और इआ आदेश होते हैं।[३] यथा–

एक्क + सि = एक्कसि
एक्क + सिअं = एकसिअं
एक्क + इआ = एक्कइआ
} एकदा

(१८) भ्रू शब्द से स्वार्थ में मया और डमया ये दो प्रत्यय होते हैं।[४] यथा–

भ्रू (भु) + मया =भुमया
भ्रू (भ) + डमया =भमया
} भ्रूः

(१९) शनि शब्द से स्वार्थिक डिअम् प्रत्यय होता है।[५] यथा–

---

१. इदंकिमश्च डेत्तिअ-डेत्तिल-डेद्दहाः ८।२।१५७
२. त्वादेः सः ८।२।१७२
३. वैकाद्दः सि सिअं इआ ८।२।१६२
४. भ्रुवो मया डमया ८।२।१६७
५. शनैसो डिअम् ८।२।१६८

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

शनैः + इअ = सणिअं (शनैः), सणिअमवगूढो।

(२०) मनाक् शब्द से स्वार्थिक डयम् और डिअम् प्रत्यय विकल्प से होते हैं।[१] यथा–

मनाक् (मण) + अय = मगयं
मनाक् (मण) + इय = मणियं, मणा } मनाक्

(२१) मिश्र शब्द से स्वार्थिक डालिअ प्रत्यय विकल्प से होता है।[२] यथा–

मिश्र (मीस) + आलिअ = मीसालिअं, मीसं (मिश्रम्)

(२२) दीर्घ शब्द से स्वार्थिक रो प्रत्यय विकल्प से होता है।[३] यथा–

दीर्घ (दीह) + र =दीहरं, दीहं (दीर्घम्)

(२३) विद्युत्, पत्र, पीत और अन्ध शब्द से स्वार्थ में ल प्रत्यय विकल्प से होता है।[४] यथा–

विद्युत् (विज्जु) + ल = विज्जुला, विज्जू (विद्युत्)

पत्र (पत्त) + ल = पत्तलं, पत्तं (पत्रम्)

पीत (पीअ) + ल = पीअलं, पीवलं, पीअं (पीतम्)

अन्ध + ल = अंधलो, अंधो (अन्धः)

(२४) नव और एक शब्द को स्वार्थ में विकल्प से ल्लो प्रत्यय होता है।[५] यथा–

नव + ल्ल–नवल्लो, नवो (नवकः)

एक + ल्ल = एकल्लो, एक्को (एकक:)

अवरि + ल्ल = अवरिल्लो

(२५) पथ शब्द से होने वाले ण के स्थान में इकट् प्रत्यय होता है।[६] यथा–

पह + इअ = पहिओ (पान्थः)

(२६) आत्म शब्द से होने वाले ईय के स्थान में णय आदेश होता है।[७] यथा–

अप्प + णय = अप्पणयं (आत्मीयम्)

---

१. मनाको न वा डयं च ८।२।१६९
२. मिश्राड्डालिअः ८।२।१७०
३. रो दीर्घात् ८।२।१७१
४. विद्युत्पत्र–पीतान्धाल्लः ८।२।१७३
५. ल्लो नवैकाद्वा ८।२।१६५
६. पथो णस्येकट् ८।२।१५२
७. ईयस्यात्मनो णयः ८।२।१५३

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

(२७) सर्वाङ्ग शब्द से विहित इन के स्थान में इक आदेश होता है।[१] यथा–

सव्वंग + इअ = सव्वंगिओ (सर्वाङ्गीणः)

(२८) पर और राजन् शब्द से सम्बन्ध बतलाने के लिए क्क प्रत्यय होता है।[२] यथा–

पर + क्क = परक्कं(परकीयम्)

राय + क्क = राइक्कं (राजकीयम्)

(२९) संस्कृत तद्धितान्त रूपों के ऊपर से प्राकृत के रूप बनाये जाते हैं। यथा–

धनिन् = धनी–धणी कानीनः = काणीणो

आर्थिकः = अत्थिओ मदीयम् = मईयं

तपस्विन् = तपस्वी = तवस्सी पीनता = पीणया

भैक्षम् = भिक्खं राजन्यः = रायण्णो

आस्तिकः = अत्थिओ कोशेयम् = कोसेयं

आर्षम् = आरिसं पितामहो = पिआमहो

यदा = जया; कदा = कया, सर्वदा = सव्वया, तदा = तया, अन्यदा = अण्णहा; सर्वथा = सव्वहा।

तर और तम प्रत्यय

प्राकृत में एक से श्रेष्ठ और सबसे श्रेष्ठ का भाव बतलाने के लिए तर (अर), तम (अम), ईयस् (ईअस) और इष्ठ (इट्ठ) का प्रयोग संस्कृत के समान ही होता है। इन तुलनात्मक विशेषणों की (Degree of Comparison) की तालिका दी जाती हैं।

तिक्ख (तीक्ष्ण)	तिक्खअर (तक्ष्णतर)	तिक्खअम (तीक्ष्णतम)
उज्जल (उज्ज्वल)	उज्जलअर (उज्ज्वलतर)	उज्जलअम (उज्ज्वलतम)
पग्गहिय (प्रगृहीत)	पग्गहियअर (प्रगृहीततर)	पग्गहियतम (प्रगृहीततम)
थोव (स्तोक)	थोवअर (स्तोकतर)	थोवअम (स्तोकतम)
अप्प (अल्प)	अप्पअर (अल्पतर)	अप्पअम (अल्पतम)
अहिअ (अधिक)	अहिअअर, अहिअदर (अधिकतर)	अहिअअम, अहिअयम (अधिकतम)
पिअ (प्रिय)	पिअअर (प्रियतर)	पिअअम (प्रियतम)
हलु, लहु (लघु)	हलुअर (लघुतर)	हलुअम (लघुतम)

१. सर्वाङ्गादीनस्येकः ८।२।१५१ २. पर–राजभ्यां क्क –डिक्कौ च ८।२।१४८

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY

अप्प (अल्प)	कणीअस (कनीयस्)	कणिट्ठ, कणिट्ठग (कनिष्ट)
बहु	भूयस (भूयस्)	भूइट्ठ (भूयिष्ठ)
पावी (पापी)	पावीयस (पापीयस्)	पाविट्ठ (पापिष्ठ)
गुरु	गरीयस (गरीयस्)	गरिट्ठ (गरिष्ठ)
जेट्ठ (ज्येष्ठ)	जेट्ठयर (ज्येष्ठतर)	जेट्ठयम (ज्येष्ठतमं)
विउल (विपुल)	विउलअर (विपुलतर)	विउलअम (विपुलतम)
पडु (पटु)	पडीअस, पडुअर (पटीयस्)	पडिट्ठ, पडुअम (पटुतम)
धणी (धनी)	धणिअर	धणिअम
महा	महत्तर	महत्तम
वुड्ढ (वृद्ध)	जायस (ज्यायस्)	जेट्ठ (ज्येष्ठ)
थूल (स्थूल)	थूलअर (स्थूलतर)	थूलअम (स्थूलतम)
बहुल	बंहीअस (बंहीअस्)	बंहिट्ठ (बंहिष्ट)
दीहर (दीर्घ)	दीहरअस (दीर्घतर)	दीहरअम (दीर्घतम)
अंतिम (अन्तिम)	नेदीअस (नेदीयस्)	नेदिट्ठ (नेदिष्ठ)
दूर	दवीअस (दवीयस्)	दविट्ठ (दविष्ठ)
पाचअ (पाचक)	पाचअअर (पाचकतर)	पाचअअम (पाचकतम)
विउस (विद्वान्)	विउसअर (विद्वत्तर)	विउसअम (विद्वत्तम)
मिउ (मृदु)	मिउअर (मृदुतर)	मिउअम (मृदुतम)
धम्मी (धर्म्मी)	धम्मीअस (धर्मीयस्)	धम्मिट्ठ (धर्मिष्ठ)
खुड्ड (क्षुद्र)	खुड्डअर (क्षुद्रतर)	खुड्डअम (क्षुद्रतम)
मइम (मतिमान्)	मईअस (मतीयस्)	मइट्ठ (मतिष्ठ)

❑ ❑ ❑

FOR PRIVATE & PERSONAL USE ONLY